वर्ष १०, अंक ७

श्रीकृष्णाय नमः

अप्रैल

वैशाख १९९२

वार्षिक चन्दा ५)

सम्पादक—

ब्र० कृष्णानन्द, भ्रमानन्द

एक प्रति ।)

विषय सूची

सं०	लेख	लेखक	पृष्ठ
१.	वेदोपदेश		१८९
२.	पुराण-गाथा	[ले० श्री भोलेबाबा जी	१९०
३.	मेरी छवि	[ले० श्री मदन गोपाल सिंहल सम्पादक 'आदेश' मेरठ	१९४
४.	सन्तोष का पुरस्कार		१९५
५.	विनय-मंजरी	[ले० श्री [illegible] जी श्रीवास्तव	१९७
६.	योग-साधन	[ले० श्री स्वामी शिवानन्द जी	२००
७.	बाँसुरी	[ले० श्री मदन गोपाल, सिंहल सम्पादक 'आदेश' मेरठ	२०४
८.	मेस्मेरेज़्म	[ले० श्री यमुना प्रसाद श्रीवास्तव नरसिंहपुर	२०५
९.	वह	[ले०—लक्ष्मीप्रसाद मिस्त्री 'रमा'	२०६
१०.	कबीर दास	[ले० श्री गंगाविष्णु पाण्डेय विद्याभूषण	२०९
११.	समालोचना		२१४
१२.	सतसंग सभा		२१५
१३.	साहित्य समालोचना		२१६
१४.	नीलकंठ (कविता)		२१७
१५.	अर्द्ध शताब्दी महोत्सव		२१८
१६.	भजन		२१९

भक्ति के नियम

१. भगवान की भक्ति का प्रचार करना, गो रक्षण और उसके लिए गोचर भूमि छुड़वाना, जलाशय बनवाना, मनुष्य मात्र के लिए शिक्षा का प्रचार करना वैदिक अनुभूत औषधियों का प्रचार करना, ग्रामों में परस्पर के झगड़े और वैमनस्य मिटा कर शान्ति व प्रेम बढ़ाना, सब संस्थाओं में भगवद्भक्ति और धर्म का भाव जाग्रत करना, राजा और प्रजा सब ही का हित चिन्तन करना।

२. यह पत्र प्रतिमास की पूर्णिमा को प्रकाशित हुआ करेगा।

३. अग्रिम वार्षिक चन्दा सर्व साधारण से २) होगा

४. जो महानुभाव २५) या इससे अधिक देंगे वह पत्र के संरक्षक और ५) देने वाले सहायक होंगे।

५. बाहर का कोई भी व्यापारिक विज्ञापन नहीं लिया जायगा।

६. लेखों को प्रकाशित करना, न करना, घटाना व बढ़ाना सर्वथा सम्पादक के अधिकार में होगा।

७. लेख सम्बन्धी पत्र व्यवहार सम्पादक के नाम से और प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र व्यवहार मैनेजर भक्ति के नाम से होना चाहिए

८. जिन ग्राहकों के पास जिस मास की "भक्ति" न पहुंचे, उनको स्थानीय पोस्ट आफिस में पूछ कर उस मास की अमावस्या से पूर्व कार्यालय में सूचना भेजनी चाहिये। स्थानीय पोस्ट आफिस में बिना पड़ताल किये अथवा अमावस्या के बाद सूचना आने पर "भक्ति" नहीं भेजी जायगी।

९. पत्रोत्तर के लिये जवाबी, कार्ड भेजना चाहिए।

भक्ति के संरक्षक और सहायक

राव श्रीराम जी रईस नांगल	१२५)
भक्त नन्दकिशोर जी चर्खी दादरी	१२१)
डा० गोपालदास जी रईस लाहौर	१११)
धर्म सिंह मावजी जेठवा कोलरीप्रोप्राइटर झरिया	१२०)
आनरेबिल डा० गोकलचन्द जी नारंग वज़ीर लोकल सेल्फ गवर्नमेन्ट लाहौर	१०.
बाई बदामो देवी पुत्री लाला गनेशीलाल चर्खीदादरी	१०१)
श्रीमती रानी निहालकौर धर्मपत्नी कप्तान राव बहादुर बलबीरसिंह जी	१०)
राव बहादुर, कप्तान राव बलबीर सिंह जी ओ० बी० ई० रामपुरा	५१)
चौधरी शिवसहाय जी कोसली	५१)
लाला श्यामलाल जी कपूर दिल्ली	५१)
महाशय शोभाराम जी डूंगरवास	२५)
डाक्टर भंवरभाई नारायणभाई देसाई महुधा जिला कैरा	२५)
पण्डित पन्नालाल जी तोपखाना नं० ५ अम्बाला	२५)
चौधरी उमराव सिंह पहाड़ी धीरज दिल्ली	१५)
पण्डित जयराम जी 'सनातन' देहली	५)
सूबेदार मेजर दीपचन्द जी	५)
गंगासिंह गनर नं० ५ तोपखाना अम्बाला	५

जनता में भगवद्भक्ति भाव को जाग्रत करने वाली सचित्र मासिक पत्रिका।

वर्ष १० } [illegible] आश्रम रेवाड़ी, वैशाख ता० १ अप्रेल १६३६ { अंक ७ पूर्ण संख्या ११५

वेदोपदेश

अग्ने वाजस्य गो मत ईशानः सहसो यहो।
अस्मे धेहि जात वेदो महि श्रवः॥

भावार्थ--हे बल-पुत्र अग्नि! तुम प्रभूत गो युक्त अन्न के मालिक हो। हे सर्व भूत ज्ञाता! हमें तुम बहुत सा धन दो।

पुराण गाथा

नृसिंह से प्रहलाद की प्रार्थना।

[ले० श्रीस्वामी भोले बाबा जी]

नारद-हे शौनक! यद्यपि प्रह्लाद बालक था, तो भी वह जानता था कि समस्त वर भक्तियोग के बाधक हैं, इसलिये मुसकराता हुआ भगवान से कहने लगा:-

प्रह्लाद-हे भक्तवत्सल! मैं तो स्वभाव से ही, जैसे नदी नीचे कोही जाती है, ऐसे विषय भोगों में आसक्त हूं, वरों का लोभ देकर आप मुझे लालच में न डालिये, क्योंकि विषयों की स्वाभाविक आसक्ति से डरकर उससे विरक्त होकर मैं आपकी शरण में आया हूं, यदि आपके कहने से मैं जिन भोगों से डरकर जिनके छोड़ने की इच्छा से आपकी शरण में आया हूं। उन्हीं भोगों में फंस गया, तब तो मैं कहीं का भी नहीं रहूंगा यानी लोक परलोक दोनों से भ्रष्ट हो जाऊंगा हे भगवन! यह तो मैं जानता हूं कि भक्तों के लक्षण जानने के लिये आप उनकी परीक्षा लिया करते हैं, क्योंकि जन्म मरण के फंदे में डालने वाली अनेक हृदय की ग्रन्थियां हैं, उन ग्रन्थियों को जानने के लिये ही आप अपने सेवक को भोगों का लोभ देते हैं, नहीं तो आपतो करुणामय हैं, इसलिये आप लोभ नहीं दे सके। जिनके हृदय की ग्रन्थियां टोटी नहीं होती, वे ही आपसे वर मांगलेते हैं, आपके सच्चे भक्त आपसे कुछ नहीं मांगते, क्योंकि जो सेवक आपकी सेवा करके वर चाहता है, वह सेवक नहीं है किंतु बनिया यानी व्यापारी है, इसलिये सच्चा सेवक नहीं है। विद्वानों का तो ऐसा निश्चय है कि जो सेवक अपनी इच्छायें पूरी करने के लिये स्वामी की सेवा करता है, वह सच्चा सेवक नहीं है और जो स्वामी सेवक को अपनी सेवा में रखने के लिये कुछ देता है, वह सच्चा स्वामी नहीं है। मैं आपका निष्काम भक्त हूं और और आप निष्कपट स्वामी है, यह ही मेरा और आपका संबंध है, इसके सिवाय जैसे राजा और सेवक का संबंध होता है, ऐसा आपका और मेरा कोई संबंध नहीं है।

हे वरदाताओं में श्रेष्ठ! यदि आप मुझे वर देना चाहते है, तो मैं आपसे यह ही वर मांगता हूं कि मेरे हृदय में कोई अभिलाषा न उठे यानी मेरा मन निर्वासना होजावे। यदि आप कहें कि अभिलाषा करने से ही तो सबकुछ मिलता है, फिर अभिलाषा मनमें न उठे, ऐसा क्यों चाहता है तो हे प्रभो! अभिलाषा करने से मिलता कुछ नहीं है किंतु अभिलाषा करते ही इन्द्रिय, मन प्राण, शरीर, धर्म, धैर्य, बुद्धि, लक्ष्मी, लज्जा, तेज, स्मरण और सत्य ये सब नष्ट होजाते हैं और हे कमल-

भगवन् ! जब मनुष्य मनमें स्थित समस्त कामनाओं को त्याग देता है, तो वह आपके समान ऐश्वर्य को ही प्राप्त हो जाता है अथवा यों कहना चाहिये कि मनुष्य को पहले से ही आपके समान ऐश्वर्य प्राप्त है परन्तु इच्छा ने उस ऐश्वर्य को ढांक दिया है, इसलिये मनुष्य पूर्ण होकर भी अपूर्ण, नित्य होकर भी अनित्य और पवित्र होकर भी अपवित्र बनगया है अथवा बन जाने का उसे भ्रम होता है, जब आपकी उसके ऊपर कृपा होती है, तब वह आपका भजन करके अपने पूर्व के ऐश्वर्य को फिर प्राप्त होता है। आपकी और आपकी माया की महिमा को आपकी कृपा बिना कोई जान नहीं सकता, इसलिये आप भगवान्, महापुरुष, हरि, अद्भुत सिंह, ब्रह्म और परमात्मा के लिये नमस्कार है। क्योंकि छः ऐश्वर्य से युक्त होने से आप भगवान् कहलाते हैं, पूर्ण होने से महापुरुष, भक्तों के पापों को नष्ट करने से हरि, सबसे बृहत् यानी बड़े होने से ब्रह्म और देहादि काल्पनिक आत्माओं से परे होने से परमात्मा कहलाते हैं। आपको नमस्कार है ! नमस्कार है !! नमस्कार है !!!

नारद-हे शौनक ! प्रह्लाद के ऐसे भक्ति और वैराग्य युक्त वचन सुनकर नृसिंह भगवान् इस प्रकार कहने लगे।

श्रीभगवान्-हे वत्स ! यद्यपि तुझ सरीखे मेरे अनन्यभक्त इस लोक अथवा परलोक की अभिलाषाओं को नहीं चाहते, यह बात सत्य है तो भी मैं तुझे आज्ञा देता हूं कि इस मन्वन्तर भर लोक में दैत्येश्वरों के भोगने योग्य भोगों का भोग कर। यदि तू कहे कि भोगों के भोगने से तो मैं संसार में फंस जाऊंगा तो, यह बात नहीं है, मेरी प्यारी कथाओं का सेवन किया कर और मैं जो सबमें एक रूप से विद्यमान हूं, यज्ञों का स्वामी और ईश्वर हूं, ऐसे मुझको हृदय में रखकर यज्ञ किया कर और समस्त कर्मों को मेरी प्रीति के लिये करता हुआ कर्मों के फल से संबंध मत रख। ऐसा करने से भोगों में तू लिप्त नहीं होगा और कर्म तुझे बंधन नहीं कर सकेंगे। भोग से पुण्य को क्षय कर, पुण्य से पापों को क्षय कर, ऐसा करने से तेरी निर्मल कीर्ति समस्त ब्रह्मांड में फैल जायगी और देवलोक में गायी जायगी। अन्त में जब कालके वेग से तेरा शरीर छूट जायगा, तब तू मुझको ही प्राप्त हो जायगा। तेरे कहे हुए इस मेरे स्तोत्र का जो कोई मनुष्य पाठ करेगा अथवा सुनेगा और मरते समय तेरा तथा मेरा स्मरण करेगा, वह कर्म के बंधन से छूट जायेगा।

प्रह्लाद-हे महेश्वर ! आप की आज्ञा शिर माथे पर, हे वरदाता ! मैं आपसे एक वर मांगता हूं कि मेरा पिता आपके ईश्वरीय, तेज को नहीं जानता था, इसलिये आपकी निन्दा किया करता था, आप जो साक्षात् सब लोकों के गुरु और स्वामी हैं, उनको वह अपने अज्ञान से अपने भाई का मारने वाला समझता था, इसलिये वह आपके ऊपर क्रोध किया करता था, इसलिये मुझ आपके भक्त के साथ द्वेष किया करता था। ऐसा करने से उसने दुःख से पार होने योग्य अमित पाप ही किया है। हे कृपणवत्सल ! उस पाप से मेरा पिता छूट जावे, ऐसा वरदान दीजिये। यद्यपि मैं समझता हूं कि जिस समय उसे आपने अपने कटाक्ष से देखा तभी वह पवित्र होगया, फिर भी पिता का प्रेम मुझे इस बात को आपसे स्वीकार करा लेने के लिये मैंचता है।

श्री भगवान्-हे निष्पाप! इक्कीस पीढ़ियों सहित तेरा पिता पवित्र होगया, क्योंकि हे साधो! कुलको पवित्र करने वाला तू उसके घर में उत्पन्न हुआ है। शान्तचित्त, समदर्शी, साधु सदाचारी मेरे भक्त यदि कीकट देश में अथवा उससे भी अपवित्र देश में हों, तो भी उसे पवित्र करदेते हैं। हे दैत्येन्द्र! मेरी भक्ति करते २ पुरुष की अन्य अभिलाषायें जाती रहती हैं, इसलिये वे किसी प्राणी को किसी प्रकार कभी कुछ क्लेश नहीं देते। लोक में मेरे भक्त तेरे समान ही आचरण वाले होते हैं। मेरे सब भक्तों में तू एक ऐसा उदाहरण है कि तेरे समान होने के लिये दूसरों को यत्न करना चाहिये। तेरा पिता मेरे अंगों के स्पर्श से सर्वथा पवित्र होगया और तुझ पवित्र संतान के प्रताप से वह उत्तम लोकों को प्राप्त होगा। अब तुझे अपने पिता की मृतक क्रिया करनी चाहिये। हे तात! अब तू अपने पिता के पद पर आरूढ़ होकर ब्रह्मवादियों के कथन के अनुसार मुझ में मन लगा कर और मेरे परायण होकर समस्त कर्मों को कर।

नारद-हे शौनक! भगवान् के कथनानुसार प्रह्लाद ने अपने पिता का मृतक कर्म किया और पीछे श्रेष्ठ २ ब्राह्मणों ने उसका वेद में कही हुई रीति के अनुसार राज्याभिषेक किया। इन्द्रादिक देवताओं सहित जब ब्रह्मा जी ने देखा कि अब नृसिंह भगवान् के मुखपर प्रसन्नता झलकने लगी, तब वे पवित्र वाणियों से स्तुति करके इस प्रकार कहने लगे:-

ब्रह्मा-हे देवों के देव! हे सबके स्वामी! हे प्राणियों के उत्पन्न करने वाले! हे सबसे प्रथम वर्तने वाले! अपने लोक भर को क्लेश देने वाले इस पापी दैत्य को मार डाला, यह बहुत अच्छा हुआ। इस दैत्य ने मुझसे वर पाया था, इसलिये मेरी सृष्टि का कोई प्राणी इसको नहीं मार सका था। इस दैत्य ने तपोबल और योगबल से गर्वित होकर वेदों के समस्त धर्मों का नाश कर दिया था। यह भी अच्छा हुआ कि आपने इसके बड़े भगवद्भक्त सज्जन तथा छोटी आयु के पुत्र को मृत्यु से बचाया और वह आपकी शरण में आया, यह भी अच्छा हुआ। हे भगवन्! आपका यह स्वरूप सब आपत्तियों से बचाने वाला है। यहां तक कि जो मनुष्य पवित्र चित्त होकर इस स्वरूप का ध्यान करता है, उसको यह स्वरूप सबके मारने वाले कालके भय से भी बचादेता है।

श्री भगवान्-हे कमल से उत्पन्न होने वाले ब्रह्मा! तुम दैत्यों को ऐसा वरदान मत दिया करो, उग्र स्वभाव वालों को वर देना सर्प को दूध पिलाने के समान है।

नारद-हे शौनक! इतना कहकर विष्णु भगवान् अन्तर्धान होगये। उन भगवान् को कोई देख नहीं सका और ब्रह्मा भी इनका पूजन करते हैं, फिर भी वे अपने भक्तों के कल्याण के निमित्त अपनी माया से अनेक अवतार धारण करके अनेक प्रकार की लीलायें करते हैं। जिन लीलाओं के पढ़ने और सुनने से पापी से भी पापियों के अंतःकरण निर्मल हो जाते हैं और वे सहज ही में जन्म मरण रूप संसार सागर से पार होकर अक्षय सुख का अनुभव करते हैं। जो मूढ़ स्त्री पुरुष भगवान् की कथाओं का अनादर करते हैं, उनको न तो सत् असत् का विवेक होता है, न वैराग्य होता है और शम दमादि दैवी गुण भी उनको प्राप्त नहीं होते किंतु दंभादि आसुरी

स्वभाव का त्याग न करने से ऊंच नीच योनियों में बारम्बार जन्मते मरते हुए अनेक प्रकार दुःखों का अनुभव करते हैं, इसलिये श्रेयाभिलाषियों को सर्वदा आदर सहित भगवान् की कथाओं का श्रवण करना उचित है, संसार से तरने का और परमानन्द प्राप्त करने का यह ही सुलभ उपाय है।

हे शौनक! भगवान् के अंतर्धान होने के पीछे प्रह्लाद ने ब्रह्मा, शिव, प्रजापति और इन्द्रादि देवताओं का पूजन किया और शिर झुका कर उनको प्रणाम किया, क्योंकि वे सब भगवान् के ही अंश अथवा स्वरूप हैं भगवान् के सच्चे भक्त सब प्राणियों में भगवान् को ही देखते हैं, किसी में भेद नहीं देखते, क्योंकि भेद अज्ञान का किया हुआ है, विवेक दृष्टि से तो एक निर्गुण ब्रह्म ही परिपूर्ण है। श्रुति कहती है कि एक देव ही सब भूतों में गूढ छुपा हुआ है। पश्चात् मुनियों सहित ब्रह्माजी ने प्रह्लाद को दैत्य और दानवों का राजा बनाया, हे शौनक! इसके पीछे ब्रह्मा आदि देवताओं का प्रह्लाद ने फिर पूजन किया और उन्होंने पूजा को स्वीकार करके प्रह्लाद को आशीर्वाद दिया और अपने स्थानों को गमन किया। इस प्रकार जय और विजय विष्णु के दोनों पार्षदों ने दिति के उदर से जन्म लिया और विष्णु भगवान् का वैर भाव से हृदय में दृढ ध्यान रक्खा और भगवान् ने उनका वध किया। सनन्दन आदि के शाप से उनको तीन जन्मों में राक्षस होना पड़ा, इसलिये वे दूसरे जन्म में कुम्भकर्ण और रावण नामक राक्षस हुआ और रामचन्द्र के हाथ से मारे गये और तीसरे जन्म मे शिशुपाल और दंतवक्र होकर कृष्ण के हाथ से मारे गये और उनका ध्यान करने से उन्हीं में लीन हुए।

हे शौनक! शिशुपाल के कृष्ण भगवान् के हाथ से मारे जाने पर यह ही कथा मैंने युधिष्ठर धर्मराज के पूछने पर सुनायी थी। जैसे भ्रमर का ध्यान करने से कीट भ्रमर के रूप को ही प्राप्त हो जाता है, इसी प्रकार बहुत से राजा कृष्ण भगवान् का ध्यान करने से उनके हाथ से मारे जाने से उन्हीं को प्राप्त हो चुके हैं। जैसे भेद रहित भक्ति से अन्य पुरुष कृष्ण के सायुज्य को प्राप्त हो चुके हैं, इसी प्रकार वैर भाव से ध्यान करने वाले भी उन्हीं के सायुज्य को प्राप्त होते हैं, इसमें संशय नहीं है, प्रसंग से इसमें हिरण्याक्ष और हिरण्यकशिपु दैत्यों का वर्णन है, नहीं तो इसमें परम भागवत प्रह्लाद के चरित्र का वर्णन है। परम भागवत प्रह्लाद का इस चरित्र में भक्ति ज्ञान और विष्णु भगवान् के यथार्थ स्वरूप का वर्णन है, अध्यात्मविद्या का भी इसमें भली प्रकार निरूपण किया है। जो भाग्यवान् भगवान् विष्णु के संबंधी कर्मों से सुशोभित इस पुण्यकारी आख्यान को श्रद्धा पूर्वक पढ़ता है अथवा सुनता है, वह कर्म बंधन से छूट जाता है और जो कोई आदि पुरुष इस नृसिंह लीला को तथा दैत्येन्द्र के तप को पवित्र होकर पढता है अथवा प्रह्लाद के पुण्यकारी प्रभाव को सज्जनों की सभा में सुनाता है, वह उस लोक को प्राप्त होता है जिसमें किसी का किसी प्रकार का भय नहीं है।

पाठक! नारद और शौनकादि ऋषियों का संवाद समाप्त हुआ इस संवाद से यह भी शिक्षा मिलती है कि पांच भूतों का रचा हुआ यह नर शरीर नश्वर है, एक दिन भी जीने का इसका भरोसा नहीं है, फिर भी यह मनुष्य शरीर समस्त साधनों का भंडार है, इस शरीर से मनुष्य विवेक वैराग्य आदि साधन करके जन्म मरण रूप संसार से पार होकर परमानन्द रूप ब्रह्म को प्राप्त कर सकता है। सिवाय आत्म ज्ञान के परमानन्द रूप मोक्ष प्राप्त करने का अन्य साधन नहीं है, इसलिये हम सब को भोगों में आसक्त न होकर इस सुर दुर्लभ मनुष्य शरीर से परमेश्वर की भक्ति करके सर्वदा के लिये संसार से मुक्त होकर निर्भय और अचल परम पद को प्राप्त करके निर्भय और अचल हो जाना चाहिये। इस पुरुषार्थ के सिद्ध करने के लिये ही करुणाकर ईश्वर ने यह देह दिया है। करुणाकर ईश्वर का उपकार मानकर इस शरीर का सदुपयोग करना ही हमारा तुम्हारा और सबका कर्तव्य है सच कहा है।

कुं०—करुणा कर जगदीश ने, दीन्हा है नर देह।
मोक्ष द्वार है देह यह, नहि इसमें संदेह॥
नहि इसमें संदेह, देह यह नश्वर।
देय परम पद नित्य, भजे यदि नर परमेश्वर॥
भोला! काम दम साध, नित्य भज शाश्वत शंकर।
दे मिथ्या सब छोड़, क्षेम कर शिव करुणा कर॥

तेरी छवि

[लेo श्री मदन गोपाल सिंहल, सम्पादक 'आदेश' मेरठ]

व्योम मध्य इन्दु की विशाल किरणें ये देव,
जगत को तेरा ही प्रकाश दिखलाती है।
दया का प्रसार तेरी सागर बनाता नित्य,
तेरी ही प्रशंसा ये तरंग माला गाती है॥
तेरे हंसने की ध्वनि ही में तो हमारे नाथ,
नदियां निनाद कर सिन्धुतीर जाती हैं;
पर औ अचर जड़ चेतन में तेरी ही तो,
अनुपम छवि ये प्रकृति दरशाती है॥

सन्तोष का पुरस्कार

प्रेषक—"कथा साहित्य का एक प्रेमी"

सेठ रामचन्द्र एक धर्म प्रिय व्यक्ति हैं। पास में काफ़ी धन भण्डार है, पतिव्रता स्त्री है और नाम जारी रखने वाला एक सुन्दर पुत्र है। यही संसार का सुख है। सेठजी के हृदय में दया है। विप्र और साधु के नाम से पानी पानी होजाते हैं। दुःखी को देखकर आंखों में जल भर आता है। निर्धन व्यक्तियों की कन्याओं का विवाह करने में आपको आनन्द प्राप्त होता है।

सेठ जी के पुत्र ने सातवें वर्ष में पैर रक्खा। शिक्षा संस्कार की तैयारी हुई। सेठजी ने भागवत बैठा ली। पण्डित ज्वालादत्त आपके यहां सदैव भागवत सुनाने आया करते थे। अबकी बार भी आये। यद्यपि इस वर्ष पण्डितजी एक घरेलू मुकद्दमे में परेशान थे, मामला हाईकोर्ट में पहुंचा था और जायदाद हाथ से जाने वाली थी, तथापि वे सेठजी का मोह न छोड़ सके। सोचा कि मुकद्दमे के लिये एक रकम भी हाथ लग जायगी।

सानन्द कृष्ण चर्चा आरम्भ और समाप्त हुई। पूजन भी होगया। दूसरे दिन प्रातः समय ही भोज देदिया जाय, यही सबकी राय हुई। भागवत की पूजा में ५००) रु० आये पण्डितजी ने सारा रुपया सेठजी को सौंप दिया। सोचा कि चलते समय ले लिया जायगा।

प्रातः भोज होने के कारण रात भर रसोई का काम होना था, सेठजी, सेठानी जी, पुरोहित जी और मुहल्ले की स्त्रियां काम में लगीं। सेठजी के मकान के एक ऊपरी कमरे में पण्डितजी का निवास था, सेठजी का पुत्र माता को व्यस्त जान कर ऊपर ही सोरहा।

२

सेठ कुमार के शरीर पर ४-५ हजार का सुनहला आभूषण था पण्डित ज्वालादत्त के ऊपर शैतान सवार हुआ। चार हजार यह और पांचसौ यह हाईकोर्ट का काम आसानी से चल जायगा। यदि यह काम न किया जायगा तो खर्च कहां से आवेगा। जायदाद चली जायगी तो लोगों में हंसी होगी और ग्राम में रहना कठिन हो जायगा। जरा दिल को कड़ा करने से मामला साफ़ है। प्रातः गंगा न्हाने जाता ही हूं। आज और भी सवेरे चला जाऊंगा। घाट पर न जाकर, शव को गंगाजी में डाल दूंगा। क्या कोई भी संदेह कर सकता है कि पण्डितजी द्वारा यह काम हुआ होगा? लोग यही ख्याल करेंगे कि कहीं द्वार पर निकल गया होगा। बदमाश उड़ा ले गये,

जेवर ले लिया होगा और उसे मार डाला होगा। ऐसी घटनाएं हुआ ही करती हैं। सब ठीक है। मुझ पर सन्देह भी न होगा और मेरा काम भी बन जायगा। पंडितजी ने रुमाल निकाला, सोते हुए बच्चे के गले में डाला दो तीन रगड़े दिये, दो हिचकियां आईं और काम तमाम होगया। कमरे के सामने फर्श बिछा हुआ था बच्चे को उसमें लपेट कर उसे एक किनारे रख दिया। सारा आभूषण अपने बटुए में रख दिया। उस बटुए में पूजन का सामान था उसमें चन्दन था, शंख था और थे शालिगराम। पण्डितजी सोगये परन्तु नींद कहां?

३

तब तक पण्डितजी का नीचे बुलावा हुआ। आप गये। सेठजी ने कहा अपने कर कमलों के द्वारा कुछ पूड़ियां कढ़ाई में छोड़ दीजिये। पण्डितजी बैठ गये। दो तीन घण्टे तक पूड़ियां सेकते रहे। दो बजे के बाद ऊपर गये। विचार किया कि दो घण्टे के बाद गंगा स्नान को चलना चाहिये। चर्पाई पर लेट गये। शीतल वायु बह रहा था। कढ़ाई के सामने से आरहे थे, बहुत कुछ जागे थे। कुछ विचार करने के लिये नेत्र बन्द किये। सहसा सोगये।

पांच बजे प्रातः सेठजी नित्य ही स्नान किया करते थे। सब रात जागने पर भी आपने स्नान किया। चन्दन लगाने के लिये पूजा की कोठरी में गये तो देखा कि वहां पर कितनी ही पड़ोस की स्त्रियां बेकायदा सो रही हैं। रात भर काम किया था। रसोई तैयार होगई थी। स्त्रियां निश्चिन्त सो रही थीं। सेठजी ने सोचा कि ऊपर चल कर पण्डितजी का चन्दन काम में लावें। ऊपर गये। पण्डितजी नाक बजा रहे थे। सेठजी ने उनको जगाया नहीं। बटुए में हाथ डाला तो पुत्र का गहना देखा। सोचा—"पण्डितजी ने यह जानकर कि आज भीड़ है, कहीं कोई गैर आदमी गहना न उतार ले, होश्यारी के साथ यह उतार लिया होगा। अच्छा किया।" पण्डितजी के साथ सेठजी का घर वालों जैसा नाता था। सन्देह की गन्ध भी प्रकट न हुई। सेठजी ने चन्दन लगाया और चुपचाप उतर गये। गहना वहीं रहा। नीचे पहुंचते २ सेठानी ने पूछा —"श्यामसुन्दर कहां है?" श्यामसुन्दर नाम था उस लड़के का जो कि फर्श में लिपटा हुआ अनन्त निद्रा भोग रहा है। सेठजी ने आश्चर्य से कहा—"तुम्हारी चारपाई पर होगा?" नहीं, वह तो रात भर मुझे दिखलाई न पड़ा। मैंने समझा कि तुम्हारी चारपाई पर सो रहा होगा या पण्डितजी के साथ सो रहा होगा। सेठजी ने पूछा—"क्या मेरी चारपाई पर नहीं है?" सेठानी ने कहा—"नहीं ऊपर तो देखो।" सेठजी ऊपर आये। पण्डितजी बदस्तूर सो रहे थे। सेठजी ने उनको जगाया। सूर्य भगवान ने विश्व महामण्डल पर अपना अधिकार जमा लिया था। कुछ किरणें, सेठजी के मुख पर पड़ कर उनके हृदय का यह भाव व्यक्त कर रही थीं कि-श्यामसुन्दर कहां है? और दूसरी किरणें पण्डितजी के मुख पर पड़ कर उत्तर दे रही थीं कि इस फर्श में मरा पड़ा है। पण्डित जी का मुख विवर्ण हो रहा था। वे अत्यन्त चिंतित और भयातुर थे, एवं बार बार फर्श की तरफ ताकते थे। सेठजी ने पुत्र का समाचार पूछा! उनके पास गहना मिला ही था। फलतः पुत्र का समाचार पंडितजी अवश्य जानते हैं, ऐसा उनका विश्वास

था। पंडितजी उठे और धोती उठाकर गंगा नहाने जाने लगे। पुत्र के विषय में अपनी अज्ञानकारी ज़ाहिर की। और सेठजी को अन्यान्य प्रश्नों के लिये मौक़ा ही न दिया। पंडितजी चले गये। सेठजी उसी चारपाई पर बैठ गये। उन्होंने सोचा कि यह फ़र्श तो शाम तक बिछा हुआथा। किसने और क्यों इकट्ठा किया? हत्या तो स्वयं बोलती है। सेठजी ने फ़र्श को फैलाया। लड़का निकल आया। तब तक सेठानीजी भी आ पहुंची। एक चीख़ निकली और सेठानी जी पुत्र केशव के ऊपर पछाड़ खाकर गिर पड़ीं।

५

सेठानी को होश में लाकर सेठ ने कहा—"जो होना था सो हुआ" गहनों के लिये पंडितजी ने यह काम किया है। अब इन आंसुओं को पी जाओ। रोने से और शोर करने से पुत्र तो मिलेगा नहीं रसोई ख़राब जायगी। यह जानकर कि तुम्हारे यहां मृत्यु हो गई है कौन खाने आवेगा? चलो नीचे चलें।"

अपूर्ण

विनय-मंजरी

[लं० स्वर्गीय श्री० गजराज जी श्रीवास्तव]

प्रेषक—विद्याभूषण पं० मोहन शर्मा, विशारद भू० पू० सम्पादक 'मोहिनी'

इसमें मध्य प्रदेशान्तर्गत छत्तीसगढ़स्थ रायपुर जिले के निवासी स्वर्गीय श्रीयुत् बाबू गजराजजी श्रीवास्तव नकल नवीस ने भगवत जनों के हेतु नानाप्रकार के कवित्त सवैया आदि ललित छंद दिये हैं जिनमें श्री पतित पावन प्रणतपाल दीनबन्धु भगवान श्री रामचन्द्र जी की विनय वर्णित हैं।

पाठकों को इनका रसस्वादन करने से ज्ञात होगा कि श्री० गजराज बाबू को भक्ति रस की कविता लिखने में कहां तक सफलता मिली। वह सच्चिदानन्द प्रभु के एक विनम्र भक्त थे, और आदर्श कवि भी थे। इनकी विविध विषय की कविताएं भी इसी प्रकार भावपूर्ण, गम्भीर और ओजमयी हैं। हिंदी के सद्यः प्रकाशित 'काव्य-कलाधार' मासिक पत्र के परिचयांक के द्वितीय खंड में आपका संक्षिप्त जीवन चरित्र कविताओं के उदाहरण सहित प्रकाशित हुआ है। यहां भी भगवद्भक्तों के ज्ञान लाभार्थ इनकी सर्वोत्तम रचना "विनय मंजरी" अविकल रूप से दी जाती है। आशा है 'भक्ति' के कृपालु पाठक स्वर्गीय श्री

वास्तवजी को इस बहुमूल्य कृति का आदर करेंगे।

तुलसी अपने राम को रीझ भजो या खीज।
खेत परे पै जानि है, उलटो सीधो बीज॥

चौपया छंद

जय जय गज बदना सब सुख सदना,
रिद्धि सिद्धि के नाथा।
मोदक कर धारी मूस सवारी,
सिंदुर सोहै माथा॥
विद्या गुण राशी विघ्न विनाशी,
सब गावें तव गाथा।
विनवै गजराजा हैं गण राजा!
कीजे मोहि सनाथा॥१॥

सवैय्या

दूज के चन्द्र विराजत माथ,
जटा मंह गंग की धार बही है।
गोरे से गात लसै सित भस्म,
जनेऊ भुजंग विराज रही है॥
बाम भवानि गणेश उछंग,
पुरान न वेद न अन्त लही है।
भक्ति महा भवमोचन दीजिए,
नाथ विनय इक मोर यही है॥२॥

चौपया छंद

जय जय सिय रमना दश मुख दमना,
भव निशि सूरज साईं।
नयना नव नीरज दीर्घ प्रबल भुज,
हिय भृगुपद परछाईं॥
ब्रह्मा शिव नारद शेष विशारद,
जेहि गुण पार न पाईं।
सोइ दशरथ नंदन दुःख निकंदन,
हृदय बसो रघुराई॥३॥

सवैय्या

मंगल मूरत मारुत नंदन,
मूल अमंगल नाशन हारे।
संकट सोच विमोचन नाथ,
हितू सुर संतन राम पियारे॥
वीर महा रणधीर उदार,
दुलार रमापति के रखवारे।
बारहिंबार विनय हौं करौं,
सुनि दुर्गम काज सुधारन हारे॥४॥

दोहा

करिवर मुख इक दंत प्रभु सब विद्या आगार।
बुद्धि विमल मुख दायिनी दीजै नाथ उदार॥

सोरठा

बन्दौ अति हरखाय महि तनया गिरिजा गिरा
हूजे मोहिं सहाय जानि दीन सुत कुबचन

दोहा

राम रूप सुन्दर सुखद, बरन सकत जग कौन
शिव अज वाणी वेद अहि होइ थकित रहि मौन

चौपाई

सुन्दर श्याम अंग रघुराजा।
देखत कोटि काम छविलाजा॥

क्रान्ति दिवाकर भूरि प्रकाशा ।
मोह महातम पावहि नाशा ॥
मणि मय क्रीट विराजत माथे ।
मानहुं अगणित सविता गाथे ॥
कुंचित कारे केश मनोहर ।
अमित अलीसों छवि अति सुन्दर ॥
सुन्दर भाल कोटि छवि छाये ।
राजिव नयन विशाल सुहाये ।
द्वादश तिलक लिलार विराजा ।
ज्योति अकार बीच तेहि भ्राजा ॥
भृकुटी विकट युगल अति चारू ।
जाके बस सब जग व्यवहारू ॥
को कहि सक श्रुति शोभा भूरी ।
मकराकृत कुन्डल अतिरूरी ॥

दोहा

नासा करि समान सुचि, जाहि धरत मुनि ध्यान
लोल गाल चिक्कन ललित, मनहु अनंग समान
बिम्बा फल सम अधर सुचि, शोभा अमितअपार
सुभ्रदसन दमकत मनहुं, दामिनि मेघ मंझार

चौपाई

सुन्दर चिबुक सुशोभित ग्रीवा ।
जनु इत नोइ सुखमाकर सीवा ॥
नाग शुंड भुज दंड सजाये ।
करतल युग जल जात सुहाये ॥
धनुष बाण अति सुन्दर सोहत ।
उपमा मिले न कवि मन मोहत ॥
उर उतंग शोभा अधिकाई ।
बनमाला भृगुलता सुहाई ॥
उदर रेख त्रय कवित अपारा ।
अति गहीर नाभी विस्तारा ॥
कटि केहरि तरकस मय बाना ।
सोहत रुचिर पीत परिधाना ॥
जंघ युगल जनु सांचे ढारा ।
पिंडरी बनक न बरने पारा ।
चरण कमल बरणों किमि भाई ।
अमित प्रभाव प्रगट श्रुति गाई ॥

दोहा

पग नख आभा रुचिर जनु कंचन पै जल जात
नित्य धरैं जेहि ध्यान शिव सो पै किमि कहि जात

हरि गीतिका छंद

कुल तरणि वर मणि राम रघुवर,
जानकी सह राजते ।
सब पारषद गण सेवा,
भनत कवि मन लाजते ॥
श्रुति शेष शिव अज नारदादिक,
नेति नेति पुकारते ।
सोई राम गहिये मोहि डूबत,
दीन जन जिमि तारते ॥

सोरठा

गिद्ध व्याध रिपि नारि गुह गणिका सबरी करी
तारे सकल खरारि पाहि पाहि अब मोहि हरि

पद्धरि छंद

शिव शिव जपै सबै सुख होई ।
हर हर कहत हरत दुःख सोई ॥
शंकर से सब संकट जाई ।
भोला से भव जाल नसाई ॥
महादेव मोहादिक नासै ।
संभू सम्पति देत जु खासे ॥
शूली हरे शूल जग जेते ।
भवक हते भव भय हर लेते ॥
धूर्जटि धूर मिलावत पापा ।
त्रय लोचन हर तीनहुं तापा ॥
मदनारी मद मान नसावे ।
उग्र उग्र कारजहू निभावे ॥
कहं लगि कहौं ईश परताप् ।
जाके हृदय बसैं नित आप् ॥
हर समान दाता नहीं कोई ।
रह गजराज शंभु कर होई ॥

दोहा

मदन जारि रति दीन्ह वर आशुतोष भगवान् ।
ऐसे औढर दानि को क्यों न भजहु तजिमान ॥
जेहि सेवत सिद्धि सुरेश मुनी,
भव हंस राशी गुण गान करैं ।
दरकालहु सो हरि नाम जपै,
हर भव हर को डर होत वरैं ॥
भव पापिहुं पाप करै भव को,
भव होत महा भव से नगरै ।
गजराज न ऐसे हरि को भज्यो,
कहु का फल मानुष रूप धरै ॥

योग-साधन

[ले० श्रीस्वामी शिवानन्द जी]

श्रो स्वामीजी ! जब आप किसी आश्रम का आरम्भ करें तो गुरु उम, नाम और अपने आराम का सामान न बनायें । साधारण तौर पर यह देखा जाता है कि जब लोग कोई आश्रम खोलते हैं तो आरम्भ में जनता की सेवा करते हैं । वही आश्रम वाले जब धनी हो जाते हैं और जब लोगों में इनकी प्रतिष्ठा जम जाती है तो जनता की सेवा की परवाह नहीं करते । यह अहंकारी और प्रम-

मानी करने वाले होजाते हैं। लालच से बचो और नम्र सेवक की भांति सेवा करो। स्वर्गवासी बाबा काली कमली वाले का उदाहरण अपने सामने रक्खो। यद्यपि उनका आश्रम था परन्तु वह अपने सिर पर जल का पात्र रख कर घेत्रों में पहुंचाते थे और स्वयं आश्रम से बाहर भिक्षा मांग कर खाते थे। उनके तप का यह फल है कि अब तक उनके प्रताप से अब भी हजारों मनुष्यों का निर्वाह होरहा है।

विद्या, धन, कुल, रूप मद प्रभुता, यौवन, नारि।
यह बाधक हरि भक्त के कहे बुध वेद विचार॥

जो घास से भी अधिक नम्र है, वृक्ष की समान शील है, जो स्वयं अपने मान की परवाह नहीं करता परन्तु औरों का मान करता है, ऐसा मनुष्य हर समय भगवान् के भजन का अधिकारी है।

जब तुम अपने जीवन में ८ घण्टे सोने में खो दिए, शेष समय व्यर्थ की बातें करने, झूठ बोलने, लोगों को धोखा देने, धन कमाने और अन्य स्वार्थ के कामों में खर्च कर दिया तो तुम अध्यात्म उन्नति की आशा किस तरह कर सकते हो? यदि तुम नित्य प्रति भगवान् के ध्यान और नाम सुमरण में आध घण्टा भी खर्च नहीं करते तो किस तरह आशा करते हो कि तुम अमरत्व को प्राप्त हो जाओगे।

रचना दो प्रकार की है। जीव-रचना और ईश्वर-रचना। ईश्वर-रचना में कोई दुःख नहीं है। पानी प्यास बुझाता है, अग्नि गरम करती है, वृक्ष छाया प्रदान करते हैं वायु जीवन देता है। गौ दूध देती है। ममता, मेरी स्त्री, मेरा घर मेरा पुत्र यह जीव की रचना है। यही दुखदाई है। जब तुम सुनते हो 'घोड़ा मर गया, तो तुम को कोई दुःख नहीं होता परन्तु जब तुमको यह पता लगता है "मेरा घोड़ा मर गया" तो तुमको तुरन्त दुःख हो जाता है। मनुष्य समाज के दुःख का मूल कारण ममता है। ममता का नाश करके आत्मिक शान्ति में प्रवेश करो।

जब मृत्यु का दूत तुम्हारे जीवन को समाप्त करने आवेगा तब वह तुम्हारे इस बहाने को नहीं सुनेगा "मुझे अपने जीवन में भगवान् के भजन करने का अवसर नहीं मिला" मनुष्य जन्म धारण करके पशुओं का सा जीवन व्यतीत करना ढोंग और घृणा का काम है।

भगवान् कृष्ण का नील वर्ण होने का कारण यह है कि नील वर्ण भगवान् की सर्व व्यापकता द्योतक है। नील वर्ण व्यापक है।

भगवान् के चार हाथ का कारण यह है कि चार हाथ धर्म्म, अर्थ, काम और मोक्ष के द्योतक हैं। चार हाथ यह दर्शाते हैं कि भगवान् हरा सबको सब दिशाओं से अपनी तरफ बुलाते हैं, यह भगवान् की सब को आश्रय देने की आदत है।

तू एक है तू अनेक है। यह तेरा सगुण रूप है। न तू एक है न अनेक है यह तेरा निराकार रूप है। तू द्वैत है तू अद्वैत है न तू द्वैत है न अद्वैत है। तू द्वैत और अद्वैत से परे है तू निराकार है, तू साकार है, तू न निराकार है और न साकार है। तू सगुण है, तू निर्गुण है। तू सगुण और निर्गुण से परे है। तू है और नहीं से भी परे है।

शिवाजी ने एक किले को बनाने के लिए हजारों मजदूर लगाए। उसको यह अभिमान हो

गया था कि मैं हजारों मनुष्यों को भोजन देता हूं। शिवाजी के गुरु स्वामी रामदास ने इसको अनुभव कर लिया। रामदास जी ने शिवाजी को बुलाया और उसे एक पत्थर तोड़ने के लिए कहा जो उसके महल के सामने पड़ा था। शिवाजी ने अपने नौकर से तुरन्त पत्थर तुड़वाया। जब पत्थर तोड़ा गया तो उसमें से एक मेण्डक निकल कर कूद पड़ा। रामदास जी ने पूछा शिवा! इस मेण्डक को कौन खाने के लिए देता है? शिवाजी बड़ा लज्जित हुआ और साष्टांग दण्डवत करके अपनी भूल की क्षमा मांगी और कहा महाराज आप अन्तर्यामी हैं। आपने मेरे अभिमान को जान लिया जैसा मैंने खयाल किया था कि इन कुलियों को मैं खिलाता हूं। अब मेरी आंखें खुल गई हैं। स्वामी मुझे क्षमा करो, मैं आपका शिष्य हूं॥

संसार में बुरा पदार्थ कोई भी नहीं है। तुम कहोगे कि विष्टा बुरी वस्तु है। मैं कहता हूं नहीं है। शूकर के लिए यह बड़ा स्वादिष्ट भोजन है। यह बागों और खेतों में बहु मूल्य खाद का काम देता है। विष्टा क्या कहती है सुनो। यह कहती है 'मत मुझे दोष मत लगाओ। मैं तो तुम्हारे सम्पर्क से ही बुरी हुई हूं। तुम्हारी जिह्वा, पेट और आन्तों ने ही तो मुझे खराब किया है। तुम्हारे संग में आने से पहले मैं बहुत स्वादिष्ट नारंगी थी। मैं मीठा रसगुल्ला था। मैं कलमी आम था अच्छा और बुरा सापेक्षिक शब्द हैं यह मन की उपज हैं। आम मीठा नहीं है। खयाल मीठा है। स्त्री सुन्दर नहीं है। खयाल सुन्दर है। विष्टा अपवित्र नहीं है। विचार अपवित्र है। मनको शुद्ध करो। आत्मा का ध्यान करो जो कि सब का कारण है। आत्मा का ज्ञान होते ही सब ही शुद्ध है, सब विषचित्र है, सब अच्छा है और सब सुन्दर है। बुराई को भलाई में बदल डालो। यही पृथ्वी पर स्वर्ग लाने का ढंग है।

जिस प्रकार पानी के दो रूप हैं। निराकार और बरफ। इसी प्रकार ब्रह्म निराकार और साकार है। वह अवतार लेकर रूप धारण कर लेता है। जिस प्रकार वायु का कोई रूप नहीं है परन्तु बगोला बन कर रूप बन जाता है इसी प्रकार निराकार ब्रह्म साकार बन जाता है।

जिस प्रकार राजा कभी २ जेल खाने को निरीक्षण करता है और उस समय किसी कैदी की कोठड़ी को देखने के लिए उसमें दाखिल हो जाता है। वह यह कर्म कैदी की भलाई के लिए करता है। वह अपने कर्म में सर्वथा स्वतन्त्र है और अपनी मरज़ी से स्वयं ही कोठड़ी में दाखिल होता है। इसी प्रकार अवतार अपनी ही इच्छा से मनुष्यों की भलाई के लिए पार्थिव शरीर को स्वयं ही धारण करता है। वह राजा की भान्ति सर्वथा स्वतन्त्र होता है और उसका माया पर पूरा नियन्त्रण होता है। इसी प्रकार जीव अविद्या का गुलाम है और ऐसा ही रहेगा जब तक इसको अपनी आत्मा का साक्षात् नहीं हो जावेगा।

ओ कुण्डलनी माता! छ चक्रों को भेदन करके। पृथ्वीचार-दल वाला मूलाधार चक्र। जल रूपी चक्र छ दल वाला स्वाधिष्ठान चक्र, अग्नि चक्र दस-दल वाला मनीपूरक नाम वाला, हृदय में बारह-दल वाला अनाहत-चक्र, आकाश चक्र सोलह-दल वाला विशुद्ध नाम वाला। दो दल वाला आज्ञा चक्र भ्रकुटी के मध्य में। हजारों दल वाला सहस्र सार नाम का चक्र कुण्डलनी और

परिशिव का स्थान।

ओ३म् सब कुछ है। ओ३म् परमात्मा, ईश्वर और ब्रह्म का नाम व चिह्न है। ओ३म् ही तुम्हारा असली नाम है। ओ३म् ही मनुष्य के तीन प्रकार के अनुभवों का नाम है। ओ३म् ही तीन प्रकार की सृष्टि का कारण है। ओ३म् ही से यह जगत् उत्पन्न हुआ है। ओ३म् ही में जगत् स्थित है और ओ३म् ही में यह लय हो जावेगा। अ स्थूल जगत् का द्योतक है, उ मानसिक और सूक्ष्म जगत् का वाचक है। म समस्त, अज्ञान, सुषुप्ति का कारण है। ओ३म् बुद्धि से परे जो पदार्थ हैं उनका द्योतक है। ओ३म् ही जीवन का आधार है और समस्त ज्ञान का भी ज्ञान आधार है।

शक्ति प्राप्त होने पर मनुष्य को मद हो जाता है। शक्ति सम्पन्न पुरुष अपनी शक्ति का सदैव दुरुपयोग करता है। वह सब को नियंत्रण में रख कर उन पर अधिकार करना चाहता है। यही कारण है कि राजयोग प्रत्येक जिज्ञासु के लिए यम, नियम का पालन करना आवश्यक बतलाता है। जो मनुष्य यम नियम में स्थित है वह अपनी शक्ति का दुरुपयोग नहीं कर सकता। वह दूसरों पर अधिकार न जमा कर स्वयं नम्र होता है। उसमें त्याग और सेवा का भाव होता है।

जो अपनी रसनाइन्द्रि पर काबू पा लेता है वह अन्य इन्द्रियों पर आसानी से काबू पा सकता है। रसना ही मनुष्य की अधिक शत्रु है। इसलिए युवावस्था में ही इस पर काबू करना चाहिए। वृद्ध होने पर इन्द्रियों पर काबू पाना कठिन हो जाता है। जिह्वा ज्ञान इन्द्रि है परन्तु बोलने से इसको कर्मेन्द्रि भी कह सकते हैं।

सच्ची शान्ति ध्यान से ही प्राप्त हो सकती है, जिससे मन आत्मा में स्थिर हो जाता है। कार्य के परिवर्तन से भी चित्त को आराम मिल जाता है। बिना काम के व्यर्थ पड़े रहना और चित्त को मस्त हाथी की भान्ति इधर उधर घुमाना और हवाई किले बनाने से चित्त को शान्ति नहीं मिल सकती।

मन जिस चीज़ का ध्यान करता है। उसी का रूप बन जाता है। यह प्रकृति का अटल सिद्धान्त है। जब तुम किसी मनुष्य के दोषों पर विचार करते हो तो उस समय तुम्हारा मन वैसा ही रूप धारण कर लेता है, चाहे उस मनुष्य में वह सब दोष न भी हों परन्तु तुमको ऐसा ही भासने लगता है। यह गलत विचार करने और बुरे संस्कारों के प्रभाव से होता है। यह सम्भव है जो दोष तुम उस पर आरोपण करना चाहते हो उनमें से एक दोष भी उसमें न हो और तुम्हारा विचार ईर्षा, अहंभाव और दोष-दृष्टि के स्वभाव के कारण ही बन गया हो। इसलिए दूसरों से घृणा करने और उनके दोष देखने के बुरे स्वभाव को सर्वथा त्याग देना चाहिए। दूसरों के गुण देखने के स्वभाव की वृद्धि करनी चाहिए। दूसरों के बुरे स्वभाव को देखकर पागल कुत्ते की भांति भौंकना छोड़दो। इससे तुम्हारी आध्यात्मिक उन्नति होगी, लोग तुमको पसन्द करेंगे, और सब तुम्हारा मान करेंगे।

भावुकता का भाव इञ्जिन की भान्ति एक बड़ी शक्ति है। मनुष्य को उन्नत करने में बड़ी सहायक है। यदि मनुष्य में भावुकता न हो तो वह उदासीन और आलसी बन जावे। भावुकता कर्म और क्रिया में बड़ा प्रेरणा करने वाली है। यह बड़ा गुण है

परन्तु मनुष्य को इसके आधीन नहीं होना चाहिए। भावुकता को शनैः २ उन्नत करना चाहिए और मन के समुद्र में निमग्न कर देना चाहिए और इस पर पूर्ण अधिकार रखना चाहिए। स्थूल विषय वासनाओं को भावुकता न समझना चाहिए। कुछ मनुष्य ऐसे हैं जो भड़काने वाली खबरों को सुनना बहुत पसन्द करते हैं उनको नित्य ही ऐसी बातें सुनने का चाव रहता है। यदि उनको ऐसी बातें सुनने को न मिलें तो उनका चित्त उदास रहता है। यह वही कमी है। और शान्ति चाहने वाले को इस स्वभाव को सर्वथा त्याग देना मेरा धर्म्म यह है "निष्काम भाव से, पूरी लग्न से दूसरों की सेवा करना अपने लिए किसी से सेवा न कराना यही मेरा योग और धर्म है"।

यदि संसार से अज्ञान दरिद्रता और बीमारी मिटजावे तो यह संसार स्वर्ग बन जावे हिमालय पर्वत, खुला आकाश, समुद्र और सूर्य ब्रह्म के प्रति निधी स्वरूप हैं।

बांसुरी

लेखक—श्री मदन गोपाल, सिंहल सम्पादक आदेश 'मेरठ'

घर बार त्याग दौड़ती हैं यमुना की ओर,
कुछ गोपियों ने कुछ काम बिसराई है।
व्योम मध्य इन्दु भी न आगे बढ़ता है नेक,
यमुना ने निज जल-धार ठहराई है।
छोड़ घास खाना गाय चकित दिखाई देत,
पवन है बन्द चुप पक्षी समदाई है।
चर औ अचर सब अपने को भूले जब।
विश्व मन मोहन ने बांसुरी बजाई है।

मेस्मरेजिम

[यमुना प्रसाद श्रीवास्तव नरसिंह पुर]

मेस्मरेजिम योग की एक सिद्धि है जिसे इच्छा शक्ति भी कहते हैं। यह सिद्धि मेस्मर नाम के एक आस्ट्रेलियन डाक्टर ने किसी योगी से सीखी थी और उसका उपयोग करके खूब नाम कमाया था। डाक्टर साहिब उसे 'कुम्बने मिकना-तीसों' कहा करते थे। परन्तु सन् १८२६ ईस्वी में फ्रांस की एक कमेटी ने उनकी कार्यप्रणाली से खुश होकर उन्ही के नाम पर उसका 'मेस्मरेजिम' नाम रखदिया था तबसे यह सिद्धि उन्हीं के नाम से प्रसिद्ध है।

नियमानुसार रोग का आक्रमण पांव पर होता है। वहां से वह आगे को बढ़ता है। आगे बढ़ने के समय उसकी मुठभेड़ रोगी की जीवन शक्ति से होती है। इस मुठभेड़ में यदि जीवन शक्ति हार जाती है तो वह पीछे को हट जाती है और रोग आगे बढ़ जाता है। रोग की इस बाढ़ को रोकने के लिये मेस्मरिस्ट अपनी जीवन शक्ति को पासों द्वारा रोगी के शरीर में प्रवेश करता है और वह वहां पहुंच कर रोगी की जीवन शक्ति की सहायता करती है फिर दोनों मिलकर रोग को हटा देती हैं और रोगी चंगा हो जाता है।

पासों को झाड़ा भी कहते हैं ये कई प्रकार के होते हैं। उनमें से मुख्य यह हैं।

हलके पास-रोगी के शरीर पर मस्तक से पांव तक दिये जाते हैं।

स्थानीयपास-शरीर के किसी विशेष भाग या अवयव पर उस स्थान का रोग और पीड़ा हटाने के लिये दिये जाते हैं।

स्पर्शपास-शरीर को थपथपा कर अथवा मार्जन करके दिये जाते हैं।

बहुधा मातायें इनका उपयोग बच्चों को सुलाते समय करती हैं।

आकर्षण पास-पात्र को किसी दूर स्थान से खींच लेआने में काम आते हैं। बहुधा मदारी लोग खेल तमाशों में इन्हीं का उपयोग करते हैं। झाड़, फूंक, हसिया, सरोती, घमोटा, आदि के द्वारा झाड़ा देकर अथवा कुछ मंत्र पढ़कर तथा फूंक मारकर की जाती है। गंडे, तावीज़, मूठ आदि की गणना भी इन्हीं पासों में की जाती है।

पास देने की विधि यह है।

रोगी को पलंग पर लिटाकर और अपने दोनों हाथों की मुट्ठियां बांधकर सामने खड़े होजाओ। अनन्तर रोगी का रोग निवारण करने की कामना करके दोनों मुट्ठियों को रोगी के दाहिने और बायें बाजू से अर्धचन्द्राकार बनाते हुए ऊपर तक लेजाओ। और मस्तक के पास पहुंचकर मुट्ठियों

को खोलदो। इसके पश्चात् दोनों हाथों की हथेलियों और उंगलियों को मिलाकर उंगलियों की नोकों को शरीर के ऊपर एक इंचके अंतर से धीरे २ चलाकर मस्तक और छाती पर से होते हुये नीचे तक चले आओ और पांवके पास पहुंचते ही मुट्ठियां खोलकर झटकार दो। और पुनः मुट्ठियां बांधलो। इसी प्रकार उपरोक्त क्रिया को दुहराते जाओ। बीस पच्चीस मिनट तक इस प्रकार पास देने से रोगी चंगा होजायगा। अगर कुछ कसर रह जाय तो दूसरे दिन इस क्रिया को पुनः दुहराओ रोगी अवश्य चंगा होजायगा।

रोगी के स्थान में तकिया रखकर अभ्यास करलेना चाहिये। जब सौ सवासौ पास बिना थका घट देने लगो तब समझलो कि अब छोटे मोटे रोग दूर करने की योग्यता होगई है।

मेस्मरेज़िम का प्रभाव दूर करने के लिये उलटे पास भी देने पड़ते हैं। उनके देने की विधि यह है।

उंगलियों को थोड़ी २ फैलाकर तथा हथेलियों की पीठ नीचे की ओर करके रोगी के शरीर पर १ इंच के अंतर से पांव से मस्तक तक लेजाओ और हाथों को अलग करके झटकार दो। इस प्रकार पांच या सात पास देने से पात्र होश में आजाता है।

मेस्मरेज़िम के द्वारा चिकित्सा करने से चिकित्सक की जीवन-शक्ति का ह्रास होता है, रोगों को निद्रित अथवा बेसुध करने में समय लगता है और कभी २ इसपर भी सफलता नहीं मिलती। सन् १८४१ ईस्वी में डाक्टर ब्राड साहिब का ध्यान इस ओर गया उन्होंने संशोधन की जरूरत समझ कर काट छांट की और "सजेशन अर्थात् सूचनात्मक आदेश' की क्रिया शामिल करके 'हिप्नाटिज्म' नाम रखवा दिया। तभी से यह नाम प्रचलित है।

हिप्नाटिज्म

हिप्नाटिज्म मनो नियम की थेरी है उसे इच्छा शक्ति भी कहते हैं। इच्छाशक्ति के द्वारा हिप्नाटिस्ट अपनी इच्छाशक्ति को पात्र के मस्तक में प्रवेश करता है और उसे कुछ देर के लिये अपनी इच्छशक्ति के आधीन कर लेता है। फल यह होता है कि पात्र हिप्नाटिस्ट अर्थात् प्रयोग कर्ता की मर्ज़ी के माफ़िक़ काम करने लगता है। पात्र के स्थान मे यदि कोई रोगी हुआ तो वह प्रयोग कर्ता की मर्ज़ी के अनुसार चंगा होजाता है। डाक्टर और हकीम लोग जिस रोग को औषधि और दवाईयां सेवन कराकर हफ्तों में दूर करते हैं उसी को हिप्नोटिस्ट बिना औषधि सेवन कराये केवल हाथ के इशारे से अथवा फूंक मारकर या आदेश देकर कुछ मिनटों में ही दूर करदेता है।

'जंगल जाऊं न बूटी लाऊं, न कोई वैद्य बुलाऊं।
पूरण वैद्य मिले अविनाशी वाही को नब्ज़ दिखाऊं'॥

हिप्नाटिज्म का दार मदार चित्त की शुद्धि मनकी एकाग्रता, दम की साधना, नेत्रों की आकर्षण शक्ति और प्रयोगकर्त्ता के आदेशों पर है।

चित्तकी शुद्धि मनसा, वाचा और कर्मणा से पवित्र रहने तथा अहिंसा सत्य अस्तेय, अपरिग्रह, संतोष आदि के पालन करने से होती है। इसके सिवाय प्रयोगकर्ता को दूसरे के पहिने हुए वस्त्र और उपयोग में लाई हुई वस्तुओं को व्यवहार में नहीं लाना चाहिये। उच्छिष्ट अन्न और जलादिको भी ग्रहण नहीं करना चाहिये। छुआ-छूत तथा भक्ष्य भक्ष्य का विशेष ध्यान रखना चाहिये। और शरीर

स्वस्थ रखने के लिये व्यायाम अवश्य करना चाहिये।

'वचन शुद्ध, मन शुद्ध अरु इन्द्रिय संयम शुद्ध।
भूत दया अरु स्वच्छता पर अर्पित यह शुद्ध॥

मनकी एकाग्रता

त्रिकुटी में चन्दन का तिलक लगालो और दर्पण में देखकर उस स्थान को खूब याद करलो। फिर चलते फिरते, सोते, जागते, खाते, पीते, और काम काज करते हुये, अपना ध्यान उसी स्थान पर जमाये रहो और मुखसे 'ओं ओं' 'राम राम' 'कृष्ण कृष्ण' 'नारायण नारायण' इत्यादि जो इष्ट हो कहते जाओ।

'करते कर्म करे विधिनाना।
मन राखे जहं कृपानिधाना॥'

यदि एकान्त स्थान मिलजावे और घण्टे दो घण्टे जम कर जप करो तो सोने पर सुहागे का काम करेगा और मनकी एकाग्रता बढ़ जायगी जो कुछ इच्छा करोगे वही पूरी होगी और भगवान की तटस्थता प्राप्त होने में तो सन्देह हो नहीं है।

'ज़िक्रे हबीब कम नहीं वसले हबीब से।'

और भीः-

'जो जाके मनमें रहे, सो ताही के पास।'

सिद्धि को प्राप्त करने के लिये इससे अच्छा सुगम मार्ग और कोई नहीं है। बड़े २ रोग इसके आगे पानी भरते हैं और छोटे मोटे रोग तो केवल इशारे मात्र से ही दूर होजाते है।

रात्रि को सोते समय अवश्य जप करो। जप करते २ यदि सोजाओगे तो रात्रि भर अनायास ही जप होता रहेगा और तत्काल फल की प्राप्ति होगी।

'क्या खूब सौदा नकद है,
इस हाथ दे उस हाथ ले।'

इसीलिये कहा हैः-

'जागन में सुमिरन करे, सोवत में लौ लाय।
सहजो! इक रस ही रहे, तार टूटि नहिं जाय॥'

दम की साधना

मुख बंद करके किसी स्वच्छ स्थान में खड़े हो जाओ और धीरे २ नासिका द्वारा श्वांस चढ़ाकर फेफड़ों में भरलो। जब चित्त घबड़ाने लगे तब धीरे २ श्वांस बाहर निकालदो। इस प्रकार प्रतिदिन दस, बीस मिनिट तक अभ्यास किया करो। जब बिना घबड़ाहट दस, बीस मिनट तक श्वांस रोकने लगो तब समझलो कि साधना पूर्ण होगई।

नेत्रों की साधना

एक चौकन कागज पर काली स्याही से रुपये बराबर बिन्दु बनालो और उसे दीवाल पर टांग कर सामने एक फुट के अंतर से बैठ जाओ। अनन्तर चित्त को एकाग्र करके बिन्दु के बीचों बीच दृष्टि जमाकर घूरना आरंभ करदो और जब तक आंसू न गिरें बराबर देखते रहो। दो तीन दिन के बाद बिन्दु के आसपास प्रकाश की झलक दिखाई देगी। उस समय यह कामना करने से कि सारा प्रकाश इकट्ठा होकर बिन्दु के मध्य में स्थापित होजावे बिन्दु प्रकाश से ढक जावेगा और कभी सफेद, कभी काला और कभी प्रकाशवान दिखाई देगा। परन्तु साधना सिद्धि होजाने के उपरान्त प्रायः सफेद ही दिखाई देगा। साधक को इसका अभ्यास करना बंद नहीं करना चाहिये क्योंकि पीछे से इसमें बड़े २ आश्चर्य कारक दृश्य दिखाई

देते हैं। यह त्राटक और शाम्भवी मुद्राओं का रुपान्तर है इसका अभ्यास, महामंत्र का जप और दम की साधना एक साथ करने से प्राणों का सञ्चार होता है, मनकी एकाग्रता बढ़ती और साधक की इच्छा शक्ति प्रबल होती है, नेत्रों के रोग दूर होते हैं और दृष्टि दिव्य होजाती है तथा साधक परमज्ञान और जीवन मुक्त होजाता है। यह बात महादेव जी ने तीन बार सत्य कह कर निरुपण की है।

सत्यं सत्यं पुनः सत्यं सत्यमुक्तं महेश्वरः।
शांभवीं यो विजानीयात्स च ब्रह्म नान्यथा॥

हाथों और नेत्रों की साधना

एक बड़े दर्पण को सामने रखकर दक्षिण की ओर मुंह करके बैठ जाओ और अपने प्रतिबिंब की भ्रिकुटी में दृष्टि जमाकर देखना आरंभ करदो फिर दोनों हाथों की मुट्ठियां बांधकर प्रतिबिम्ब की भ्रिकुटी में दृष्टि जमाकर देखना आरम्भ करदो फिर दोनों हाथों की मुट्ठियां बांधकर प्रतिबिम्ब के दोनों बाजुओं से अर्धचंद्राकार बनाते हुए ऊपर तक ले जाओ और मस्तक के पास पहुंच कर मुट्ठियों को खोलदो। फिर हथेलियों को मिलाकर तथा उंगलियों को कुछ टेढ़ा करके नोकों के बल मस्तक पर से नीचे तक ले जाओ और पांव के पास पहुंचते ही उन्हें अलग करके दोनों बाजुओं पर झटकार दो। पांच-सात बार पास देने तथा निम्नलिखित मंत्रोच्चारण करने से प्रयोग कर्ता का मस्तक भारी होजाता है उसे नींद आने लगती है और कुछ देर में वह सो भी जाता है और समाधिस्थ होकर वहां का आनन्द लूटने लगता है। मंत्र यह है—

मेरे हाथों की मिकनातीसी और नेत्रों की आकर्षण शक्ति दर्पण में के प्रतिबिम्ब के हृदय तथा मस्तक पर प्रभाव जमा रही है और मैं बेहोश हो रहा हूं।

आदेश उस आज्ञा को कहते हैं जिसको प्रयोग कर्त्ता पात्र से पालन करवाना चाहता है। आदेश सदा प्रभावशाली और कोमल शब्दों में देना चाहिये। आदेश देने की विधि यह है।

पात्र को एकान्त स्थान में जहां हल्ला गुल्ला न होता हो, सामने खड़ा करलो और कहदो कि वह धीरे २ आगे की ओर गिरने का विचार करे और स्वयं अपने दोनों हाथों की उंगलियां उसकी दोनों कनपटियों पर रख कर और उसकी भ्रिकुटी में दृष्टि जमा कर, उससे कहो कि जिस समय मैं अपने हाथों को खींच लूंगा उस समय तुम अवश्य गिर पड़ोगे। दो चार मिनट के पश्चात् धीरे २ हाथ खींचना और यह कहना।

अपूर्णम्

"वह"

[ले०—लक्ष्मीप्रसाद मिस्त्री 'रमा']

कैसे वह हो सकता ? उससे तू प्रेम करे ।
वह अपनावै नहीं तेरा वह बहाना है ॥
देता नहीं वह कभी किसी को दुःख देव ।
उसका तो काम नेह नेही से निभाना है ।
द्रवी भूत होता वह प्रेमी की पुकार सुन ॥
प्रेम करने में तो वह तुझ से सयाना है ।
दोष देना तेरा वृथा उसे 'राम' बार बार ॥
जानता है वो, जो होता, उस पै दीवाना है ॥
कह दूं मैं कैसे ? कि वो यहां पै कहीं है नहीं ॥
उसका तो ठौर ठौर विश्व में आभास है ।
देखा नहीं आज तक उसको किसी ने कभी ॥
सुन्दरता कैसी है औ कैसा वो लिबास है ।
जहां देखो तहां पर उसकी ही कला सब ॥
चंद्र और सूर्य में भी उसी का प्रकाश है ॥
लेकर पिपीलिका से सब प्राणियों में सदा ।
'लक्ष्मी प्रसाद' वह करता निवास है ॥

कबीर दास

गतांक से आगे।

[सं० क० श्री गंगाविष्णु पाण्डेय विद्याभूषण]

कबीर के शिष्य हिन्दू मुसलमान दोनों थे, अपने अपने नियमानुसार दोनों उन्हें जलाना तथा दफनाना चाहते थे किंतु चादर खींचने पर वहां थोड़े से फूलों के सिवा और कुछ था ही नहीं। काशी नरेश ने कुछ फूल लेकर उनका अग्नि संस्कार करदिया और भस्म स्थान पर एक चबूतरा बनवा दिया। (यही कबीर चौरा के नामसे अबतक प्रसिद्ध है)। मुसलमान शिष्य आधे पुष्प मगहर (यह स्थान गोरखपुर जिले में है) लेगये और वहां दफनाकर समाधि स्थान बना दिया। कबीर

पंथी उक्त दोनों स्थानों को पूजते हैं। कुछ लोग कहते हैं कि कबीर मगहर में मरे थे और पुष्प काशी लाये गये थे।

(ग्रंथ)

कुछ लोगों का मत है कि कबीर ने कोई ग्रंथ नहीं लिखे, ये ग्रंथ इनके शिष्यों ने लिखे हैं। बात जचती भी है क्योंकि कबीर स्वयं कहते हैं।

"मसि कागद छुयो नही कलम धरी नहि हाथ।
चारी जुग महातम कबीर मुखहि जनाई बात॥

इनके सभी ग्रंथ छन्दोबद्ध हैं और मुक्त काव्य के अन्तर्गत आते हैं। उपदेश प्रद भजन ज्ञानकांड से संबंध रखते हैं। साखियों में मार्मिक उपदेश भरा हुआ है। कबीर ने यद्यपि वेदों और शास्त्रों का अध्ययन नहीं किया था तो भी सत्संग और स्वानुभव से छांदोग्योपनिषद् के आधार पर सत्य की महिमा का बहुत अच्छा वर्णन किया है और अपने सम्प्रदायका नाम भी सत्य नामी रक्खा है। इनके वचन सीधी सादी भाषा में है और उपदेश प्रद हैं। यह बात प्रायः सभी मानते हैं कि कबीर ने अपनी सारी जिंदगी लोक कल्याण में बिताई कबीर के सब ग्रंथ यद्यपि मिश्रित भाषा में हैं किन्तु 'बीजक' ठेठ पूर्वी भाषा में कहा गया है। जैसे-

बोली हमारी पूर्वी हमें लखे नहिं कोय।
हमको तो सोई लखै धुर पूरब का होय॥

इसकी भाषा अवधी, बनारसी, मिरजापुरी और गोरखपुरी है। एकतो इनका कथन ही अटपट है दूसरे पूर्वी भाषा से और क्लिष्टता आगई है। इन्होंने सर्वसाधारण तक अपने भाव पहुंचाने के लिए ही बोल चाल की भाषा का सहारा लिया है। महात्माओं पर कविता का बंधन नहीं लगाना अतः इनकी कविता को कवित्व दृष्टि से न देखकर उपदेश दृष्टि से देखना चाहिये। कुछ लोगों का मत है कि यह ग्रंथ भागुदास नामके किसी भक्त ने लिखा है।

कबीर के समय में अनीश्वर वादिता का बड़ा भारी ज़ोर था अतः इन्होंने सगुण को लेते हुए निर्गुण का गुण गाया है। यही कारण है कि जो कबीर को सफलता मिली वह समय भक्ति की थी, अतः कबीर जो कुछ कहते थे वह भक्ति के ही आश्रय से कहते थे। ये ज्ञानी बहुश्रुत और रहस्यवादी थे। इन्होंने अपने विषय का वर्णन यथा तथा रूपमें न करके सांकेतिक रूप में किया है। जो रहस्यवादका खास ध्येय है। इनके काव्य में मधुरता भले ही न हो किंतु तल्लीनता तो है ही (रहस्यवाद में पिंगल के नियमों की आवश्यकता नहीं होती, वही कबीर ने भी किया है। रहस्यवादियों में इनका स्थान सर्व प्रथम है।

गुप्त धनको बताने वाले सांकेतिक लेखको बीजक कहते हैं। प्रकृति में आत्मधन गुप्त है इसके द्वारा उसका ज्ञान होता है, इसीलिए इसका नाम बीजक है। बीजक में राम, हरि, यादव, राय, गोविन्द शब्द सोपाधिक विशेषतः निरुपाधिक चेतन के लिए आया है। मच्छ, मांछ, मीन, जुलाहा, सियार, रोज, हस्ती, मतंग और निरंजन मनके लिए, पुत्र पारथ डुलहा, जुलहा, सिंह, मूसा, भंवरा, जोगी, जीवात्मा के लिए, माता, नारी, छेरी, गैया, तिलैया, माया के लिए, सागर, वन, सौकस, संसार के लिए, यौवन, दिवस और दिन नर शरीर के लिये तथा सखी, सहेली इन्द्रियों के लिए प्रयोग किया गया है।

वंदन और नमस्कार की रीति

कबीर पंथी आपस में मिलने पर बंदगी साहब, या सत साहब कहकर नमस्कार करते हैं, रामानुज संप्रदाय से रामानंदी और रामानन्दियों से कबीर संप्रदाय चला है इसलिए रामानन्दी और कबीर पंथियों के तिलक में बहुत कुछ समानता है। फरक केवल इतना ही है कि रामानुजी मध्य की रेखा रखते हैं और ये दोनों लाल रखते हैं। कीर्तन के समय ये लोग अपने आस पास सफेद झण्डे खड़े कर लेते हैं।

सिद्धांत

कबीर हिन्दुओं के राम और मुसलमानों के रहीम में भेद नहीं मानते थे। उनका कहना था कि हिन्दू, ईश्वर और मुसलमान अल्लाह कहते हैं वास्तव में दोनों एक हैं। ईश्वर की ज्योति सर्वत्र प्रकाशित है। उसके देखने के लिए दिव्य दृष्टि चाहिये ईश्वर का ध्यान करना मनुष्य का परम कर्तव्य है। कबीर मत पाप-पुण्य और पुनर्जन्म का मानने वाला है। गो, ब्राह्मण और दोनों पर दया करना, अहिंसा मद्य-मांस तथा व्यभिचार से दूर रहना एवं ऊंच नीच का भेद नहीं रखना ये कबीर के खास सिद्धांत हैं। दलित जातियों के प्रति सहानुभूति प्रदर्शित करने के लिए कबीर उच्च जातियों को सदा सचेत करते रहते थे।

शिष्य

कबीर के प्रधान शिष्य सुरत या सत गोपाल तथा धर्मदास वैश्य थे। धर्मदास पहिले मूर्ति पूजक थे पीछे निर्गुणोपासक होगये। इन दोनों ने कबीर के उपदेशों का ग्रन्थ रूप में संग्रह किया है। गोरख कथा, आनन्द सार, शब्दावली, मंगल बसंत, होली, रेखता, कहरा, हिंडोला, रमैनी शब्दी, ज्ञानचौंतीसा, विप्रमतीसी, चाचर, बेली बिरहुली और साखी ये प्राप्त हैं कुछ अभी तक अप्राप्त हैं जिनकी खोज हो रही है। इनके सिवा कबीर के ५ प्रसिद्ध शिष्य और थे, कमाल (इनका पुत्र) जमाल, विमल, बुढन और दादू। इन पांचों ने अपने अपने पंथ अलग चलाये किंतु चल न सके। केवल एक दादू पंथ का ही नाम सुनाई पड़ता है। कबीर की मृत्यु के बाद धर्मदास ने छत्तीसगढ़ में कबीर पंथ की शाखा चलाई और सुरत गोपाल काशी शाखा की कबीर की खास गद्दी के मालिक हुए। धीरे धीरे इन दोनों शाखाओं में बड़ा भेद होगया। कंठी और जनेऊ अब इनमें भी चालू होगयी।

कबीरदास जी के निम्नलिखित पद लोग बड़े प्रेम से गाते हैं। पद वास्तव में है भी मार्मिक।

१

झीनी झीनी बीनी चदरिया।
काहे का ताना काहे की भरनी,
कौन तार से बीनी, चदरिया।
इंगला पिंगला ताना भरनी,
सुखमन तार से बीनी, चदरिया।
आठ कमल दल चरखा डोले,
पांच तत्व गुन तीनी, चदरिया।
साँई को सियत मास दस लागे,
ठोक ठोक कर बीनी, चदरिया।
सो चादर सुर नर मुनि ओढ़ी,
ओढ़ि के मैली कीनी, चदरिया॥
दास कबीर जतन से ओढ़ी,
ज्यों की त्यों धर दीनी, चदरिया॥

२

साधो ! सहज समाधि भली ।
गुरु प्रताप जा दिन से लागी ।
दिन-दिन अधिक चली ॥ सा०
जहं-जहं डोलूं सो परिकम्पा,
जो कुछ करूं सो सेवा ।
जब सोऊं तब करूं दण्डवत,
पूजूं और न देवा ॥ सा०
कहूं सो नाम, सुनूं सो सुमिरन,
खाऊं-पीऊं सो पूजा ।
गेह उजाड़ एक सम लेखूं,
भाव मिटाऊं दूजा ॥ सा०
आँख न मूंद, कान ना रूंधूं,
तनिक कष्ट नहिं धारूं ।
खुले नयन पहचानूं हंसि हंसि ।
सुन्दर रूप निहारूं ॥ सा०
सबद निरन्तर से मन लागा,
मलिन वासना त्यागी ।
बैठत उठत कबहूं नहिं छूटै,
ऐसी तारी लागी ॥ सा०
कहे कबीर, यह उनमनि रहनी,
सो परगट करि गाई ।
दुःख-सुख से कोई परे परम पद,
तेहि पद रहा समाई ॥ सा०

अन्त में कबीरदासजी की भक्ति भाव एवं उपदेश पूर्ण कुछ साखियों को उद्धृत करके यह लेख समाप्त किया जाता है ।

हरिरस पीया जानिये कबहुं न जाय खुमार ।
मैमंता घूमत रहे नाहीं तन की सार ॥
जो तन माहें मन धरै, मन धरि निर्मल होय ।
साहब सों सनमुख रहे तो फिरि बालक होय ॥
कबीर कुत्ता राम का मोतिया मेरा नाऊं ।
गले राम की जेवरी जित खैंचे तित जाऊं ॥
अकथ कहानी प्रेम की कहीं कछू नहिं जाइ ।
गूंगे केरी सरकरा बैठ बैठ मुस काइ ॥
मन प्रतीति ना प्रेमरस ना इसमें दंग ।
क्या जानों उस पीव सूं कैसे रहसी रंग ॥
माया दीपक नर पतंग भ्रमिभ्रमि इवै पड़ंत ।
कहे कबीर गुरु ज्ञानते एक आध उबरंत ॥
पाँसा मकड़ा प्रेम का सारी किया शरीर ।
सतगुरु दांव बताइयां खेलै दास कबीर ॥
कबीर निर्भय राम जपु जब लगि दीवे बात ।
तेल घटा बाती बुझी सोवेगा दिन रात ॥
जिहि घट प्रीति न प्रेम रस पुनि रसना नहिं राम ।
ते नर याही संसार में उपजि भये बे काम ॥
जब मैं था तब हर नहीं अब हरि है मैं नांहि ।
सब अंधियारा मिट गया दीपक देखा माँहि ॥
हेरत हेरत हे सखी रहा कबीर हिराय ।
बूंद समानी समुद्र में सो कत हेरी जाय ॥
मेरा मुझ में कुछ नहीं जो कुछ है सो तोर ।
तेरा तुझको सौंपता क्या लागे है मोर ॥

कबीर रेख सिंदूर की काजर दिया न जाय।
नंन रमैया रम रहा दूजा कहां समाय॥
कबीर नौबत आपनी दिन दस लेहु बजाय।
यह पुर पट्टन यह गली बहुर न देखै आय॥
सातो शब्द जु बाजते घर घर होते राग
ते मंदिर खाली पड़े बैठन लागे काग॥
कबीर मंदिर लाख का जड़िया हीरा लाल।
दिवस चारिका देखना बिनश जायगा काल॥
कहा कियो इन आप कर कहा कहेंगे जाइ।
इतके भये न उतके चाले मूल गंवाइ॥
चलो चलो सब कोई कहे मोहिं सदेशा और।
साहब से पर्चा नहीं जायेंगे किस ठौर॥
मन मथुरा दिल द्वारका काया काशी जान।
दशवाँ द्वारा देहरा तामें ज्योति पिछान॥
राम वियोगी तन विकल ताहि न चीन्हे कोय।
तंबोली के पान ज्यों दिन दिन पीला होय॥
जिहि घर साधु न पूजिये हरि की सेवा नांहि।
ते घर मरघट सदृश हैं भूत बसैं तिन मांहि॥
कबीर हरदी पीरी चूना ऊजल भाई।
राम सनेही यूं मिले दूनो बरन गवांई॥
ऐसो कोऊ ना मिलो जिन घर देह जराइ।
पांचौं लरिका पटकि करि रहै राम लौ लाइ॥
जिस मरने से जग डरै सो मेरे आनन्द।
कब मरिहौं कब देखिहौं पूरन परमानन्द॥
ज्यों नैनन में पूतरी त्यों खालिक घट मांहि।
मूरख लोग न जानहीं बाहर ढूंढन जाहि॥
निंदक दूरि न कीजिये दीजे आदर मान।
निरमल तन मन सब करै बकि २ आनहिं आन
कबीर आप ठगाइये और न ठगिये कोय।
आप ठगा सुख ऊपजै और ठगे दुख होय॥
कबीर ऐसा बीज बो बारह मास फलंत।
सीतल छाया गहिर फल पंछी केलि करंत॥
चकई जो निशि बीछुरै आय मिलै परभात।
जो नर बिछुरै रामसों ना दिन मिलै ना रात॥
कबीरा खड़ा बजार में लिए लुकाटी हाथ।
जो घर फूकै आपनो चलै हमारे साथ॥
राम पदारथ पाइकै कबिरा गाँठिन खोल।
नहीं पहन नहिं पारखी नहिं गाहक नहीं मोल॥
कबीरा हमरा कोइ नहीं हम काहू के नाहिं।
जिन यह रचन रचाइया ताही माहिं समाहिं॥

अवश्य पढ़िये ! अवश्य पढ़िये !! अवश्य पढ़िये !!!

उत्तर भारत में पवित्र भावों की एक मात्र प्रचारिका

मासिक पत्रिका

भक्ति

श्रीभगवद्भक्ति आश्रम रामपुरा (रेवाड़ी) से भक्ति नाम की मासिक पत्रिका १० वर्ष से प्रकाशित हो रही है, जनता में धार्मिक भावों की जागृति, समाज सुधार और शिक्षा प्रचार इसका मुख्य उद्देश है, अगर आपको उन्नति मार्ग पर चलना है अपनी संतान को सुशील और सुशिक्षित बनाना है अपनी धर्मपत्नी को आदर्श पत्नी बनाना है तो उनके हाथ में "भक्ति" पत्रिका दीजिये। इसकी भाषा सरल और भाव पवित्र होते हैं, देश के धुरन्धर विद्वानों ने भी प्रसंशा की है । जनता में भगवद्भक्ति और धर्म प्रचार के कारण मूल्य लागत मात्र २) वार्षिक है, यदि आर्थिक कठिनाई बाधक न हुई तो "कृष्णांक" नाम का एक वृहत विशेषांक भी निकालने का विचार है। अभी से ग्राहक हो जाने वाले ग्राहकों को वह मुफ्त मिलेगा । अतः शीघ्र ही ग्राहक बनियेगा ।

मैनेजर "भक्ति"

श्रीभगवद्भक्ति आश्रम, रामपुरा रेवाड़ी

जिला गुड़गावां

सतसंग सभा

(प्रथम भक्ति संतन कर संगा)

[संग्रहकर्ता—श्री रेवाधर पाण्डेय]

१—मन ही मनुष्य को बन्धन में डालता है और मन ही निर्बन्ध करता है। जिसने अपनी देह और धन धाम में मन लगाया वही बन्धा हुआ है, जिसने इनको मिथ्या समझ लिया वही मोक्ष को प्राप्त हुआ। (सर्वोपनिषद्)

२—मोक्ष न कर्म धर्म से मिलता है न धन और सन्तान से बरन इन सबसे निर्बन्ध होने पर। (केवल्योपनिषद्)

३—जिसने बुरा स्वभाव न छोड़ा है, जिसने अपनी इन्द्रियों को नहीं रोका है, जिसका मन चंचल बना है, किंचित् स्थिर नहीं हुआ वह केवल पढ़ने लिखने से आत्मज्ञान को नहीं पा सकता। (कठोपनिषद्)

४—संसार में सब ओर नींद में सो रहे हैं और अचेत होकर अलग अलग सुपने देख रहे हैं इसलिए किसी की निन्दा मत करो। (रामायण बाल्मीकि)

५—जैसे पेड़ की जड़ को सींचने से उसकी डालियां और पत्ते सब तृप्त हो जाते हैं वैसे ही एक परम पुरुष की अद्वितीय इकली भक्ति से सब देवी देवता संतुष्ट हो जाते हैं। (महा निर्वाण तंत्र)

६—दूसरे के धर्म के लिये चाहे वह कैसा ही बड़ा हो अपने धर्म में न चूके। (धम्मपद)

७—कर्म से केवल मन शुद्धि होती है तत्व बस्तु प्राप्त नहीं होती वह तो उपासना से ही मिलती है उसके लिये मुख्य जुगत ध्यान है।

८—भीतरी पूजा का बड़ा लाभ है बाहरी पूजा का बहुत कम। जब जब अन्तर अभ्यास में रस और आनन्द मिले उसमें लिपट जाओ और मालिक का धन्यवाद करो, पर जब कभी रस न आवे मन रूखा फीका रहे तो उस पूजा को निष्फल न समझो और घबराकर छोड़ न दो विश्वास रक्खो कि जो सेवक बिना मजदूरी पाये काम करता है उसकी इज्जत मालिक अधिक करता है आगे चलकर उपहार के साथ सब दाम चुका देता है। (हिन्दी ग्रन्थ-धार्मिक)

९—महात्माओं के पदों और उपदेशों का चित्त लगाकर समझ समझ कर पाठ करना बड़े लाभ की बात और एक प्रकार का सत्संग है विशेष कर जब संसारी कामों के पीछे कोई अन्तर अभ्यास में बैठे और चित्त रूखा फीका व बासनाओं से भरमाये तो वैराग्य व प्रेम के घाट पर आने के

लिये चेतावनी, विनय प्रेम के शब्द ध्यान सहित समझ २ कर और उसका अर्थ अपने ऊपर घटाकर लय से पढना बहुत उपकारी है, पाठ चाहे मन ही मन में किया जाय चाहे आवाज से। आवाज से पाठ करने में यह विशेषता है कि आंख और कान दोनों से अन्तर में असर पहुंचता व आलस दूर होता है, और दूसरे भी पाठ सुनकर फायदा उठाते हैं।

१०—भक्त वह है जो अपने मन को मिट्टी अर्थात् धरती के समान बनाले जिसमें लोग विष्टा (खाद) डालते हैं और वह अन्न देती है। (जगजीवन साहब)

साहित्य समालोचना

आदेश

आदेश मासिक पत्र सम्पादक और प्रकाशक पं० मोहनलाल जी अग्नि होत्री और सहायक सम्पादक हैं श्री मदन गोपाल जी सिंहल वार्षिक मूल्य १।) पृष्ठ संख्या २४ साइज भक्त जैसा।

यह सस्ता पत्र तीन वर्ष से आदेश कार्यालय मेरठ से निकल रहा है। अप्रैल से चौथे वर्ष में पदार्पण किया है इस चौथे वर्ष की पहली संख्या हमारे सामने है। यह पत्र सनातन धर्म का पोषक एवं धार्मिक भावों का प्रचारक है समाज सुधार पर भी प्रकाश डालता है प्रसिद्ध महात्माओं और धर्माचार्यों के इसमें लेख होते हैं। धर्म प्रिय सज्जनों को इसे अपनाना चाहिये। हम सहयोगी की हृदय से उन्नति चाहते हैं।

दुर्गाप्रशाद गुप्त

स्वास्थ्य

मासिक पत्र, प्रकाशक बाबू सूरजभान गुप्त सुन्दर शृंगार प्रेस मथुरा और सम्पादक श्री भी० गो० कौशिक वैद्य वार्षिक मूल्य २) पृष्ठ संख्या ६५ मथुरा की सुन्दर शृंगार संस्था एक व्यापारिक संस्था है इस प्रकार की संस्थाएं जो पत्र प्रकाशित करती हैं वे बहुधा अपनी विज्ञापन बाजी का विस्तार करने के लिये पत्र प्रकाशित करती हैं। हमें कई ऐसे वैद्यक पत्रों के नाम याद हैं जिनमें एक दो या तीन चार पृष्ठ में तो कुछ पठनीय सामग्री होती है और शेष ९० प्रतिशत पृष्ठों में संस्था की औषधियों के गुण गाये जाते हैं। परन्तु हर्ष का विषय है कि यह पत्र इस रोग से मुक्त है प्रस्तुत अंक में १६ लेख और कविताएँ है। भगवान्कृष्ण का एक भव्य और दर्शनीय

चित्र भी है। लेख उपयोगी और सामयिक है। यह अंक पहिलाही अंक है। इसकी सुन्दरता और लेखों की उपयोगता से जान पड़ता है कि आगे यह काफी उन्नति करेगा। प्रत्येक गृहस्थी के काम की चीज है। वैद्य और वैद्यक के विद्यार्थी भी इससे बहुत लाभ उठा सकते हैं।

दुर्गाप्रसाद गुप्त

नीलकंठ

[रचयिता श्री प० बाबूलाल भार्गव "कीर्ति" बी. ए.]

गंगा को चढ़ाये रहे सिर पै हमेसा शिव,
लखि शिवा-हीय सौति-दाह भरि आवै है।
मूसक डरै सर्पहि भी उरग मयूरो तें,
नंदि डरै सिंहहिं, जो गरज मचावै है॥
देखिकै कुटुम्बिन के झगड़े हमेसा भोला,
पीवन हलाहल विचार मन लावै है।
मेलि मुख सोचै-समै राम उर, कष्ट हूँ है।
पीवै ना इसीसे नीलकंठ कहलावै है॥

श्री नवल प्रेम सभा, देहली

का

अर्द्ध शताब्दी महोत्सव

ज्येष्ठ शु० २ से १३ तक होना निश्चित हुआ है इसमें अनेक कीर्तन मंडलियाँ और भगवद्भक्त बुलाये जावेंगे और यज्ञ कथा, भजन, अखंड कीर्तन और हरि संकीर्तन के विषय में व्याख्यान इत्यादि होवेंगे। इसमें एक चित्र प्रदर्शिनी भी रक्खी जावेगी जिसके लिये पाठकों से प्रार्थना है कि जिनके पास प्राचीन भगवद्भक्तों के चित्र होवें वे इस प्रदर्शिनी भेजें। यह प्रदर्शिनी की समाप्ति पर लौटादी जावेंगी। इसमें अन्य भगवद्भक्ती व संकीर्तन सम्बन्धी वस्तुएं भी रक्खी जा सकती हैं। हमारी प्रेमियों से प्रार्थना है कि वह अवश्य इस महोत्सव में पधारें और हमें अपने आने की सूचना दें। जो प्रेमी अपने ठहरने व भोजन का स्वयं प्रबन्ध न कर सकेंगे उनका प्रबन्ध इस सभा की ओर से होवेगा।

निवेदक:—

पं० ज्योतिप्रसाद उत्सव मन्त्री।

श्री नवल प्रेम सभा महोत्सव कार्यालय, मन्दिर श्री सत्यनारायण

इसप्लेनेड रोड देहली।

भजन

१

प्रभु किस प्रकार तारोगे यह नाव पड़ी मझधार में
मेरी नौका अति ही भारी,
खेवटिया है बहुत अनारी।
शरणागत मैं तुमरी गिरधारी,
अब गया हार इस पार मैं।
कहो कैसे कारज सारोगे ॥१॥

जब देखूं भंवर चक्र को,
उसके बीच में मगरमच्छ को।
और सोच रहा हूं अपने मत को,
अब कैसे बचूं अगाध मैं।
आपही पार पारोगे ॥२॥

नौका गल २ होती पुरानी,
और यही सोच सोचे मम प्रानी।
वृथा जात तेरी जिन्दगानी,
अब जाय पड़ी है धार मैं ॥
कब जल्दी से तारोगे ॥३॥

देखो यहां पर जल अति गहरा,
आयु दिखावे अपना लहरा।
सुनन शब्द से होगया बहरा,
लई मींच आंख अब नाथ मैं ॥
हुआ तो आपहा हारोगे ॥४॥

२

ज़रा फिरसे बैन बजादे तुझे माखन देंगे ॥ टेक ॥
सारी सखियां हिलमिल आवें,
पीछे पीछे कहतो जावें।
कोई वंशी की तान सुनादे ॥ १ ॥
माधव विरछा पर चढ़ जावें,
ग्वालिन नीचे शोर मचावें।
तू चीर हमारा लादे ॥ २ ॥
किसने बीज प्रेम का बोया,
किसने सखियों का मन मोहा।
वंशीवारे तू सांच बतादे ॥ ३ ॥
तेरी नज़ीर नहीं इस जगमें,
यमुना आन पड़ी है मग में।
कोई प्रेम की धार बहादे ॥ ४ ॥
परम सुहावन सावन आयो,
सब सखियन को मन हुलसायो।
कोई प्रेम की पींग झुलादे ॥ ५ ॥

३

तुही एक अनेक भयो है प्रभुजी अपनी इच्छा धार।
तुही सिरजे तुही पाले तुही करे संहार ॥
जित देखूं तित तूही तू है तेरा रूप अपार।
तुही राम नारायण तुही तुही कृष्ण मुरार ॥

साधों की रक्षा के कारण युग २ ले अवतार।
तुही आदि अरु मध्य तुही है अन्त तेरो उजियार॥
दानव देव तुमही से प्रकटे तीन लोक विस्तार।
जल थल में व्यापक है तुही घट २ बोलन हार॥
तो बिन और कौन है ऐसो जासों करूं पुकार।
तुही चतुर शिरोमणी है प्रभु तुही पतित उधार।
चरणदास सुखदेव तुही है जीवन प्राण अधार॥

४

धन्दे करले आप निबेरा॥
आप चेत लखु आप ठौर करु,
मूये कहां घर तेरा॥
यही अवसर नहीं चेत्दो प्राणी,
अन्त कोई नहीं तेरा॥
कहै कबीर सुनो भाई साधो,
कठिन कालका घेरा॥

५

मधुकर कौन मनाये माने॥ टेक॥
अविनाशी अति अगम अगोचर,
कहां प्रीति रसमाने॥
सिखवो जाय समाधि की बातें,
जहां हों लोग सयाने॥
हम अपने ब्रज ऐसे ही बसें हैं,
बिरह बाय बौराने॥
जाके तन धन प्राण सूर हरि,
मुख मुसकान बिकाने॥

६

है सब में सब ही ते न्यारा॥
जीव जन्तु जल थल सबही में,
शब्द व्यापक बोलन हारा॥
सबके निकट दूर सबही तें,
जिन जैसा मन कीन्ह विचारा॥
सार शब्द को जो जन पावै,
सो नहीं नेम करत आचारा॥
कहै कबीर सुनो भाई साधो,
शब्द गहे सो हंस हमारा॥

७

ऐसी रहन रहै बैरागी॥
सदा उदास रहै माया से सत्य नाम अनुरागी।
क्षमा की कफनी शील सरोनी सुरति सुमरनी जागी॥
टोपी अभय भक्तिमाथे पर काल कल्पना त्यागी॥
ज्ञान गुदड़ी मुक्ति मेखला सहज सुई ले तागी।
जुक्ति जमात कुवरी करनी अनहद धुनि लौ लागी
शब्द अधार अधारी कहिये भोख दया की मांगी।
कहै कबीर प्रीति सत्गुरु से सदा निरन्तर लागी॥

८

धुनि सुनके मनुवां मगन हुवा॥
लाय समाज रहो गुरु चरणा,
अन्त काल दुःख दूर हुवा॥
शून्य शिखर पर झालर झलके,
बर्षे अमीरस बूंद चुवा॥
सुरत निरत की डोरी लागी,
तेहि चढ़ हंसा पार हुवा॥
कहै कबीर सुनो भाई साधो,
अगम पन्थ पर पाव दिया॥

९

दुलहिन तोय पीय के घर जाना॥
काहे रोवो काहे गावो काहे करत बहाना॥
काहे पहरो हरि हरि चुरियां पहिरो नाम के बाना॥
कहै कबीर सुनो भाई साधो बिन पिय नहीं ठिकाना॥

REG D No. L 2077

भक्ति प्रेस में मिलने वाली पुस्तकें।

१.	भगवद्गीता संस्कृत तथा भाषा टीका सहिता	मूल्य ॥=)
२.	भगवद्गीता दशम अध्याय पर्यन्त ...	" ।-)
३.	गीता मूल (मोटा टाइप)	मूल्य नित्य पाठ
४.	वेदोपनिषद्	।-)
५.	अष्टोत्तरशतमन्त्रमाला	" -)।
६.	ज्ञानधर्मोपदेश	" -)॥
७.	भक्ति ज्ञान योग संग्रह	" =)॥
८.	सत्य शब्द संग्रह (गुटका)	" =)
९.	सत्य शब्द संग्रह	" ॥=)
१०.	शब्द सदाचार संग्रह	" -)॥
११.	शब्द सार संग्रह	" -)।
१२.	शब्दसंग्रह	" -)॥
१३.	सारसंग्रह	" ।)
१४.	भाषा फक्किका प्रकाश	" ।=)
१५.	मनुस्मृति सार	" =)।
१६.	भक्ति चिन्तामणि	" ।=)
१७.	भगवद्भक्तांक	" ॥=)
१८.	भगवदंक	" ॥)
१९.	गवांक	" १)
२०.	महात्मांक	" १)

नोटः-एक रुपये से कम मूल्य की पुस्तक मंगाने वालों को डाक महसूल सहित टिकट भेजने चाहियें।

मिलने का पताः-

श्री भगवद्भक्ति आश्रम, रेवाड़ी।

मुद्रक तथा प्रकाशक प्रेमानन्द ब्रह्मचारी "भक्ति प्रेस" भगवद्भक्ति आश्रम, रेवाड़ी।